श्वेत भिक्षु

भोगीलाल जे० सांडेसरा; बड़ौदा (गुजरात)

बम्बई संस्कृत सीरीजसे प्रकाशित पश्चिम भारतीय पंचतन्त्रके तन्त्र ३ का श्लोक ७६ निम्न है :

नराणां नापितो धूर्तः, पक्षिणां वायसस्तथा।
दंष्ट्रीनां च शृगालस्तु, श्वेतभिक्षुस्तपस्विनाम् ॥३-७६॥

अर्थात् मनुष्यों में नाई, पक्षियोंमें कौआ, दाढ़वाले प्राणियोंमें शृगाल, तथा तपस्वियोंमें श्वेतभिक्षु धूर्त होता है।

पञ्चतन्त्रके प्रायः सभी अनुवादकोंने श्वेत भिक्षुका अर्थ श्वेताम्बर जैन साधु किया है। कुछ वर्ष पूर्व गुजराती साहित्य परिषद्ने पञ्चतन्त्रकी सभी उपलब्ध प्रतियोंके पाठोंके आधार पर उसका एक उपोद्घात और तुलनात्मक टिप्पणी सहित गुजराती अनुवाद प्रकाशित किया था। उस समय भी मुझे लगा था कि श्वेत भिक्षुका यह अर्थ ठीक नहीं लगता। पश्चिम भारतीय पञ्चतन्त्र प्रायः जैन पाठ-परम्परा पर आधारित है, यह बात उपोद्घात (पृ० २६-२९) में बताई गई है। इसीलिए इसमें श्वेताम्बर जैन साधुका उल्लेख आना कठिन ही था।

हार्वर्ड ओरियन्टल सीरीज द्वारा प्रकाशित पूर्णचन्द्र कृत पंचाख्यानके तन्त्र ३ श्लोक ६६ में भी इसीके अनुरूप पाठ दिया गया है :

नराणां नापितो धूर्तः पक्षिणां चैव वायसः।
चतुष्पदां शृगालस्तु, श्वेतभिक्षुस्तपस्विताम् ॥३-७७॥

यह पूर्णभद्र खरतरगच्छीय जैन साधु जिनपति सूरिके शिष्य थे। इन्होंने पञ्चतन्त्रका ११९९ में पञ्चाख्यानके रूपमें रूपान्तर किया था।

अब प्रश्न यह है कि श्वेतभिक्षु शब्दका क्या अर्थ है ?

पंचाख्यानकी शब्दसूचीमें उसके सम्पादक डा० हर्टले टांकेलाने बताया है कि याकोबीके मतानुसार श्वेतभिक्षु वह है जिसका उल्लेख हरिभद्रसूरिकृत गद्य कथा समराइच्चकहा (आठवीं सदी) में पंडरभिक्षु (सं०, पांडुर भिक्षु)के रूपमें किया गया है। अपने व्यक्तिगतपत्र व्यवहारमें डा० हर्टलेने डॉ० याकोबीका यही मत पुष्ट किया है। यद्यपि उन्होंने 'समराइच्चकहा'में इस शब्दके उपयोगका निश्चित स्थान नहीं बताया है क्योंकि पञ्चाख्यानका प्रकाशन १९०८ में हुआ था जबकि याकोबी सम्पादित समराइच्चकहा (बिम्बिलयोथेका इण्डिका ग्रन्थांक १६९) का प्रकाशन १९२६ में हुआ। इससे स्पष्ट है कि श्वेत भिक्षु और पंडरभिक्खु-दोनों पर्यायवाची शब्द हैं। 'समराइच्चकहा'में पंडरभिक्खुका उल्लेख निम्न प्रकारसे किया गया है :

दिट्ठो या णेण पियवयंसओ नागदेवो नाम पंडरभिक्खू वन्दिओ सविणयं। कहवि पञ्चभिन्नाओ भिक्खुणा (पृ० ५५२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पण्डरभिक्खुओंके विषयमें इसके आगे और भी विवरण मिलता है। "नागदेवेण भणियं। वच्छ, इमं चेव भिक्खुत्तणं। पडिस्सुयमणेण। साहिओसे गोरसपरिवज्जणाइओ नियय किरियाकलावो। परिणओ य एयस्स। अइक्कंत कइवि दियहा। दिन्ना य से दिक्खा करेइ विहियाणुट्ठाणं" (पृ० ५५३)।

यहाँ प्रथम अवतरणमें उल्लिखित जिस नागदेवने पण्डरभिक्खुके रूपमें दीक्षा ली, उसीके विषयमें यह बताया गया है कि वह इसके पूर्व अपनी वाग्दत्तासे मिलने गया था। इसके बाद उसका आगेका विवरण निम्न है :

"वियलिओ झाणासओ उल्लसिओ सिगेहो, 'समासम समाससत्ति अब्भुक्खिया कमंडलु पाणिएअ" (पृ० ५५४)।

इन अवतरणोंमें यह पता चलता है कि इन भिक्षुओंके क्रियाकलापमें गोरस आदिका परित्याग सम्मिलित था और ये भिक्षु अपने साथ कमंडलु रखते थे। यह वर्णन श्वेताम्बर साधुओंकी चर्चासे मेल नहीं खाता।

जैन छेदसूत्र **निशीथसूत्र**की चूर्णिमें (सातवीं सदी) इस बातका स्पष्ट निर्देश है कि पण्डरभिक्षु गोशालकके शिष्य थे। ये महावीरके समकालीन आचार्य गोशालक द्वारा संस्थापित आजीवक सम्प्रदायके थे :

आजीवगा गोसालसिस्सा पंडरभिक्खुआ वि भणंति।

(विजयप्रेमसूरिजीकी आवृत्ति, ग्रन्थ ४, पृ० ८६५)

जैन आगम-साहित्यमें पण्डरभिक्खुके पर्यायवाचीके रूपमें पण्ड-रङ्ग (संस्कृत-पाण्डुरागं, श्वेतवस्त्र) शब्दका प्रयोग मिलता है। महावीर जैन विद्यालय, बम्बई द्वारा प्रकाशित **अनुयोग द्वार सूत्र**के सूत्र क्रमांक २२८ में निम्न उद्धरण मिलता है :

से किं ते पासण्डनामे? पंचविहे पण्णत्ते।
तं जहा समणये पंडरंगए भिक्खू, कावलियए तावसये॥

इस सूत्रकी चूर्णिमें **पण्डरङ्ग**का पर्यायवाची ससरक्ख (सरजस्क धूलियुक्त) आता है। मुनिश्री कल्याण विजयजीने अपनी **श्रमण भगवान महावीर** नामक पुस्तकमें पृ० २८१ पर यह अनुमान लगाया है कि सम्भवतः आजीवक नग्न भिक्षु होते थे। वे सम्भवतः अपने शरीर पर कोई भस्म या श्वेतधूलि लगाया करते थे। इसीलिए इन्हें पण्डरङ्ग या ससरक्ख कहा गया है। अनुयोगद्वार सूत्रके टीकाकार मलधारी हेमचन्द्रने उपरोक्त विवरणकी व्याख्यामें लिखा है कि आजीवक साधु श्रमण ही होते थे और पांडुरङ्ग आदि अनेक प्रकारके भिक्षु पाखण्ड या अजैन मतके अनुयायी होते थे। इन्होंने अपनी यह टीका बारहवीं सदीमें लिखी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि पाखण्ड विषयक अनेक परम्परायें उनके समय तक समाप्त हो चुकी होंगी। लेकिन गोशालकके अनुयायी आजीवक भाग्यसे कहीं दृष्टिगोचर होते होंगे। यह भी सम्भव है कि पण्डरङ्ग शब्दकी व्याख्याके सम्बन्धमें मलधारी हेमचन्द्रके मनमें कुछ भ्रान्ति रही हो। लेकिन यहाँ हमारे लिए महत्वकी बात यह है कि उन्होंने पण्डरङ्गको पाखण्ड या अजैन माना है।

जैन आगम ग्रन्थोंके **ओघनिर्युक्ति**के भाष्यमें भी पण्डुरङ्ग शब्दका उपयोग मिलता है। जब कोई जैन साधु चातुर्मासके लिए किसी ग्राम-नगरमें प्रवेश करता है, तब उस समयके अपशकुनोंके सम्बन्धमें ग्रन्थकारने लिखा है :

चक्कयरम्मि भमाडो, भुक्कामारो य पंडुरंगमि।
तच्चिन्नअ रुहिरपडनं, बोडिअमसिये धुवं मरणं॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थात् यदि ग्राम प्रवेशके समय कोई चक्रधर भिक्षु सामने मिले, तो चातुर्मासमें भ्रमण करना पड़ेगा, पांडुरङ्ग भिक्षु मिले, तो भुखमरी भोगनी पड़ेगी, बौद्ध भिक्षु मिले तो रक्तपात सहन करना पड़ेगा और दिगम्बर या अश्वेत भिक्षु मिलने पर निश्चित रूपसे मरण होगा।

इसी प्रकार यह भी महत्त्वपूर्ण है कि पालि साहित्यमें भी पण्डरङ्ग परिव्राजकका उल्लेख मिलता है। इस तथ्यकी ओर मेरा ध्यान प्रो० पी० वी० वापटने आकृष्ट किया है। इससे भी यह स्पष्ट होता है कि श्वेत भिक्षु श्वेताम्बर जैन साधु नहीं है। इसके समर्थनमें अनेक प्रमाण दिये जा सकते हैं। उदाहरणार्थ, दीपवंसमें बताया गया है कि सच्चे बौद्ध भिक्षुओंका तो सत्कार किया जाता है जबकि पण्डरङ्ग भिक्षुओंके सत्कारमें क्षीणता आई है :

पहीन-लाभ-संकारा तित्थिया पुथुलद्धिका।
पंडरंगा जटिला च निगंठाऽचेलकादिका॥

अर्थात् जिन विविध विचारधाराओंके तीर्थंकरोंके सत्कारमें क्षीणता आई है, उनमें पण्डरङ्ग, जटाजूट-धारी, निर्ग्रन्थ या अचेलक तीर्थंकर आदि समाहित हैं।

विनयपिटककी टीका समन्तपासादिकामें यह स्पष्ट लिखा है कि पण्डरङ्ग परिव्राजक ब्राह्मण-परम्पराके थे। समन्तपासादिकाकी एक टीका, सारत्थदीपनीमें इस विषयकी व्याख्यामें लिखा है कि पंडरंग परिव्राजक ब्राह्मण जातिके होते हैं। यह दर्शानेके लिए ही ब्राह्मण जातीय पासंडांन नामसे उनका उल्लेख किया गया है। यहाँ पण्डरङ्ग आदिको ही पाखण्ड कहा गया है क्योंकि ये सब पाखण्डका जाल फैलाते हैं।

धम्मपद अट्ठकथामें 'पंडरंग पव्वज्जं पव्वजित्वा' पद आया है। इसका अर्थ ही यह है कि पण्डरङ्ग भिक्षुको बौद्ध भिक्षुकी दीक्षा दी जाती थी।

उपरोक्त चर्चासे यह स्पष्ट है कि पञ्चतन्त्रके ३.७६ श्लोकोंमें श्वेतभिक्षु शब्दका अर्थ श्वेताम्बर साधु नहीं है। ये श्वेत भिक्षु अजैन सम्प्रदायके भिक्षु होते थे जिन्हें पण्डरभिक्षु, पण्डरङ्ग, पण्डुरङ्ग और पण्डरङ्ग परिव्राजक कहा जाता था। पालि साहित्यमें पण्डरङ्गको ब्राह्मण जातीय पाखण्ड कहा गया है जबकि निशीथचूर्णिके समान प्राचीन जैन ग्रन्थोंमें पण्डरङ्गको आजीवक बताया गया है। इसमें क्या सत्य है, यह एक पृथक् अनुसन्धानका विषय है। पण्डरङ्ग श्वेतभिक्षु आजीवक थे या ब्राह्मण जातीय थे, इसके निर्णयके लिए विशेष प्रमाणोंकी आवश्यकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org